जागृति
'ललो'

श्रीमती तोरन देवी शुक्ल 'लली'

प्राक्कथन

मुझे आदेश है कि दो शब्द लिख दूँ। 'प्राक्कथन' की आवश्यकता तो उन पुस्तकों में हुआ करती है जिनके लेखकों से साहित्यरसिक अनभिज्ञ हों। श्रीमती 'लली' जी की कृति को प्राक्कथन की अपेक्षा नहीं है, इनके पद्यों से हिन्दीप्रेमी भली भाँति परिचित हैं, और यद्यपि मैंने अभी तक इन पद्यों को किसी पुस्तक में संकलित नहीं देखा है, पत्र-पत्रिकाओं में तो इनको पढ़ने का आनन्द प्राप्त हुआ करता है। 'लली' जी की रचनाओं में विशेषता यह है कि शब्द-विन्यास में दूर-दूर से कल्पनाओं को ढूँढ़ने में, अव्यक्त अदृश्य जगत् के परिभ्रमण में, समय नष्ट नहीं करतीं। स्वाभाविक सरलता और सरसता—ये दो गुण इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं। और इन्हीं दो गुणों के कारण वे इतनी हृदय-ग्राही हैं। इनके पढ़ने से हृदय पर सद्यः- प्रभाव होता है। इनका अर्थ गूढ़ नहीं है परन्तु मर्मस्पर्शी है। प्रधानतः देशप्रेम और भगवद्भक्ति के विषय पर जो कवितायें इस पुस्तक में हैं उनकी ओर मैं पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। "अभिलाषा" शीर्षक कविता को तो कई बार पढ़ने पर भी तृप्ति नहीं होती—कितने सुन्दर भाव, कितना

आत्म-चित्रण, और कैसा विचार-स्वातंत्र्य है—

"अब देखूँगी उत्थानों में,
देश प्रेम के अभिमानों में,
वीर श्रेष्ठ के गुण गानों में,
अमर सुयश मय सन्मानों में,
दर्शन होते ही तज दूँगी,
हिय वेदना अपार—
मुझ से मिल जाना एकबार।"

"जय स्वदेश" में देशाभिमान और देशप्रेम का अच्छा वर्णन है। इनके अतिरिक्त कुछ और पद्य हैं जिनमें लेखिका के व्यक्ति का आभास मिलता है। "ध्येय" शीर्षक कविता में क्या ही अच्छी रीति से मातृभक्ति का भाव अङ्कित है! "गायक" और "रक्षा बन्धन" भी प्रशंसा के योग्य हैं। मुझे तो प्रायः सभी कवितायें बहुत रोचक ज्ञात हुई हैं। कुछ का उल्लेख इस लिए किया है कि उनमें 'लली' जी की काव्यकला विशेषरूप से देखने में आती है। कविता के गुण सब एकत्रितरूप में तो बड़े बड़े महाकवियों की कृति में नहीं मिलते—परन्तु इस पुस्तक में उनमें से अनेक गुण हैं, इसमें सन्देह नहीं। स्वाभाविकता, मौलिकता, सरलता, इस में सन्देह नहीं कि इन गुणों से 'लली' जी की कविता हिन्दी साहित्य में आदर का पात्र रहेगी।

२७-८-३६ } अमरनाथ झा

दो शब्द

श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली' हिन्दी संसार की सुपरिचित लेखिका तथा कवयित्री हैं और बहुत समय से आप हिन्दी और हिन्दी साहित्य की सेवा कर रही हैं।

'लली' जी उस समय की कवयित्री हैं जब स्त्रियों का पढ़ाना ही पाप की भाँति निन्द्य माना जाता था। हिन्दी साहित्य की जो सेवा ऐसे समय में 'लली' जी के द्वारा की गई है, जिस साहस के साथ उनके द्वारा हिन्दी हित का कार्य्य हुआ है, वह तो स्मरणीय और सराहनीय है ही; सब से अधिक स्तुत्य बात तो यह है कि उन्होंने अपने इस कार्य्य के द्वारा आगत स्त्रीसमाज के लिए पथप्रदर्शन किया है, और प्रसन्नता का विषय है कि ऐसी देवियों का साहस और श्रम इस समय फलीभूत हो रहा है। आज स्त्रीसमाज में महादेवी वर्म्मा, सुभद्राकुमारी, सूर्यदेवी दीक्षित 'उषा', स्वर्गीया 'चकोरी', 'नलिनी', तारा पाण्डेय, विद्यावती 'कोकिल' जैसी सत्कवयित्रियाँ, अपनी प्रतिभा प्रभा फैला रही हैं।

प्रस्तुत संग्रह में 'लली' जी की प्रतिभा 'जागृति' के रूप में पाँच ज्योतियों में जगमगा रही है। कोई भी ऐसी रचना नहीं

जिससे मुझे प्रसन्नता न प्राप्त होती हो। प्राय: कवयित्रियों ने कोमल, मंजुल और मधुर भावों को ही जिनमें भक्ति और शृङ्गार की ही विशेषता है, अपनी रचनाओं में प्रश्रय दिया है। राष्ट्रीय तथा ओजस्वी भाव सम्भवत: स्त्री कवयित्रियों की रचनाओं में नहीं मिलते हैं। 'लली' जी की अधिकांश रचनाओं में इन भावों का बड़ा सुन्दर समावेश हुआ है। प्रत्येक रचना यह स्पष्ट रूप में प्रकट करती है कि 'लली' जी में प्रतिभा है, हृदय है और सद्भावनाओं से आपूरित सद्भाव हैं। जिस विषय को उन्होंने उठाया है उसे रुचिरता और रोचकता के साथ रमणीक बनाते हुए आद्योपान्त चातुर्य माधुरी से निबाहा है। भाषा सरल, स्पष्ट और सर्वत्र सुबोध है। वाक्य विन्यास अभीष्ट भावों को व्यञ्जित करने वाले और मनोहारी हैं। पदावली सुव्यवस्थित, नियन्त्रित और सर्वथा संयत है। न तो काव्य में कलाकौशल का आधिक्य है और न सरसता का ही न्यूनत्व है। कहना चाहिए कि कला की अपेक्षा इन कविताओं में भाव का ही प्राधान्य है। एक सत्कवयित्री से उत्कृष्ट काव्य कला के कौशल की आशा करना भी अन्याय है। स्वभावत: उसमें हृदय प्रधान रहता है, मस्तिष्क नहीं। एक बड़ी विशेषता तो यह है कि 'लली' जी ने विशुद्ध साहित्य खड़ी बोली का उपयोग किया है। कहीं भी कदाचित् कोई विकृत शब्द नहीं आया। कहीं कहीं उन्होंने ब्रजभाषा प्रचलित संस्कृत तत्सम शब्दों के विकृत देशज रूपों का भी उपयोग किया है, किन्तु जहाँ कहीं भी ऐसे शब्द प्रयुक्त हुए हैं, वहाँ वे

पूर्णतया उपयुक्त और सर्वथा संगत हैं। उनसे भाषा और भाव दोनों में विशेष व्यञ्जकता, कोमलता तथा सरसता आ जाती है। जैसे—

मातृभूमि के हिय हरषावन, जननी मन्दिर के उजियारे। इत्यादि।

हमारा विचार तो यह है कि 'लली' जी को अपनी रचनाओं में यथेष्ट सफलता मिली है। सर्वत्र भाव सजीव और साकार हैं। विचार ऊँचे और उदार हैं। केवल कुछ इने गिने अति प्रचलित नये शब्दों को लेकर काव्य का ओतप्रोत नहीं किया गया, जैसा प्राय: आये दिन हमारी नवकवयित्रियों के द्वारा किया जाता है। अर्थात् 'लली' जी ने रचना के ही लिए रचना नहीं की। कुछ शब्दों को लेकर उनके ऊपर यथा तथा भावाट्टालिका नहीं बनाई। वरन् भावों के लिए शब्दों तथा विचारों को व्यक्त करने के लिए वाक्य विन्यास की रचना की है। इसी लिए उनके काव्य में शब्दों और भावों का पिष्टपेषण नहीं है वरन् उनकी रचना में अनुभूति व्यञ्जन हैं। मैं अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए लेखिका और प्रकाशिका दोनों को विशद बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि उनके द्वारा अभी और इसी प्रकार हिन्दी का हित होगा।

रमेश–भवन
१२–बी० बेली रोड,
इलाहाबाद
२७–८–३९

रामशङ्कर शुक्ल 'रसाल'
एम० ए०, डी० लिट्०
प्रयाग विश्वविद्यालय

'तिलका'

श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली' हिन्दी की प्रधान कवयित्रियों में अग्रागता हैं। देवियों की पथ-प्रदर्शिका में जो गुण होने चाहिए, वे सभी 'लली' जी की रचनाओं में मुझे मिलते हैं। भाषा, भाव तथा छन्द सभी सौन्दर्य-वैचित्र्य से ओतप्रोत हैं। पढ़कर मैं मुग्ध हो गया। कला की कुशलता अच्छे कलाकार इनकी रचनाओं में देखें, वे खिल उठेंगे। विशुद्ध भावनाओं को 'लली' जी ने जैसी मधुर लोरियों से जगाया है, मुझे हिन्दी साहित्य में अन्यत्र नहीं प्राप्त हुई। इनकी सुन्दरता इनकी अपनी है। मुझे पूर्ण विश्वास है, साहित्य में इनका समादर होगा। इति।

लखनऊ
१६–७–३६

—'निराला'

सम्मति

श्रीमती तोरनदेवी 'लली' जी का यह कविता-संग्रह मैंने पढ़ा। पढ़ कर मुझे आनन्द आया। 'लली' जी हिन्दी की उन कवयित्रियों में हैं, जिन्होंने आज से बहुत पहले लिखना शुरू किया और अब तक बराबर लिखती आ रही हैं। उनके दर्शन करने का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। जिस प्रकार उनका व्यक्तित्व सरल, आडम्बरहीन, वात्सल्यपूर्ण और भोलाभाला है, उसी तरह उनकी कविताएँ भी सरल, भावपूर्ण और मोहक हैं। उनकी भाषा में उलझाव नहीं है, उनके भावों में बौद्धिक उजबकपन का मिश्रण नहीं है। अतः कविताएँ हृदयग्राही हैं।

मैं 'लली' जी की इस 'जागृति' नामक कविता पुस्तक का स्वागत करता हूँ। मैं यह आशा भी करता हूँ कि 'लली' जी बराबर लिखती रहेंगी और हिन्दी भाषा को भावमयी कविताओं से विभूषित करती रहेंगी। एवमस्तु।

श्री गणेश कुटीर, प्रताप,
कानपुर, ता० २६-८-३६

बालकृष्ण शर्मा
'नवीन'

परिचय

कई वर्षों की बात है, स्त्रियों में मातृभाषा हिन्दी का प्रचार करनेवाली भारतीय सर्वश्रेष्ठ संस्था प्रयाग-महिला-विद्यापीठ के उद्योग से प्रथम भारतवर्षीय स्त्री-कवि-सम्मेलन का आयोजन हुआ था। इस सम्मेलन की सभानेत्री श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान थीं। उक्त सम्मेलन में लखनऊ से श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली' तथा स्वर्गीया श्रीमती रामेश्वरीदेवी मिश्र 'चकोरी' भी पधारी थीं। उस अवसर पर अनेक कवयित्रियों ने अपनी रचनाओं से श्रोताओं को आनन्दित किया। किन्तु जिन सज्जनों और देवियों ने उस अवसर पर 'लली' जी की कविता का रसास्वादन किया वह आप की वाणी और कविता से अत्यन्त प्रभावित हुए। इसके फलस्वरूप द्वितीय भारतवर्षीय स्त्री-कवि-सम्मेलन की सभानेत्री पद के लिए हिन्दी संसार में केवल 'लली' जी ही की ओर लोगों की एकमात्र दृष्टि रही। अन्त में आपने अपने कन्धों पर यह भार वहन भी किया।

वैसे तो काव्यरसिक पचीसों वर्षों से आप के काव्य का रसास्वादन करते चले आ रहे थे, किन्तु हिन्दी संसार को इन सम्मेलनों में 'लली' जी का परिचय प्राप्त कर अत्यन्त सन्तोष और गर्व हुआ।

'लली' जी जन्म जात कवयित्री हैं। मैं इस जिज्ञासा को मिटाने के लिए—कि किस प्रकार हिन्दी संसार को यह अमूल्य निधि प्राप्त हुई—विशेष रूप से उत्सुक था। मुझे अवसर भी प्राप्त हुआ। जीवन-वार्ता सुनने के लिए कवयित्री जी के पिता जी का आश्रय लेना पड़ा। उनसे मिलते ही उनके व्यक्तित्व की मुझ पर गहरी छाप पड़ी। उनकी ज़िन्दादिली और मिलनसारी सराहनीय है।

'लली' जी के पूर्वज दिलवल ज़िला उन्नाव निवासी थे। यह स्थान अजगैन के पास है। सन् १८५७ ई० में आप के पितामह स्वर्गीय पं० लालताप्रसाद तिवारी अपनी स्त्री और अपने साले स्वर्गीय पं० रामप्रसाद जी के साथ प्रयाग आये। प्रयाग के निहालपुर मुहल्ले में रहते हुए आप ने धन और यश दोनों प्राप्त किये। यहीं हमारी कवयित्री जी के पिता पं० कन्हैयालाल तिवारी का जन्म हुआ। पं० कन्हैयालाल जी तिवारी आर० एम० एस० में कार्य्य करने के पश्चात् इस समय पेन्शन पा रहे हैं। इसी नौकरी के सिलसिले में एक बार आप की बदली मेहसाना (बड़ौदा स्टेट) हो गई। मेहसाना के प्राकृतिक दृश्य बड़े ही मनोरम हैं। तिवारी जी अब भी उन दृश्यों का वर्णन करते करते आनन्द-विभोर हो जाते हैं। शहर के बाहर इन्हीं दृश्यों की गोद में तोरन वाली माता (देवी) का प्रसिद्ध मन्दिर है। तिवारी जी प्रतिदिन नियमानुसार अपनी धर्म्म-पत्नी श्रीमती भाग्यवती देवी के साथ इन्हीं प्राकृतिक दृश्यों की उपासना करते हुए तोरन वाली माता का दर्शन-लाभ किया करते थे। उनके पिता जी की बदली कुछ दिन पश्चात् पुनः प्रयाग हो गई।

प्रयाग आने पर 'लली' जी की माता जी अपने पिता स्वर्गीय पं० लालमणि अवस्थी जी के यहाँ चली गईं। अवस्थी जी के पूर्वज ग्राम बरिगवाँ ज़िला फतेहपुर निवासी थे, किन्तु अवस्थी जी उस समय ग्राम पिपरिया ज़िला जबलपुर में रहते थे। यहीं श्रावण सुदी १२ सम्वत् १९५३ वि० में 'लली' जी का जन्म हुआ। उनका नाम तोरनवाली माता के नाम पर तोरनदेवी रक्खा गया।

'लली' जी की सम्पूर्ण शिक्षा घर पर ही हुई। प्रथम माता जी ने अक्षर-ज्ञान कराया। इनकी माता शिक्षिता, बुद्धिमती और धर्म-परायणा महिला थीं। अतएव माता का अत्यधिक प्रभाव 'लली' जी पर पड़ा। बड़ी होने पर इन्होंने पिता जी द्वारा हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। अपने मामा पं० बेनी प्रसाद अवस्थी बी० एस–सी० एल–एल० बी० (सिहोरा) से घर पर ही पढ़ कर अंग्रेज़ी की योग्यता प्राप्त की। प्रतिभा पहले ही से थी जिस पर संस्कार डालने वाले अनेक कारणों में से एक यह था कि जिस समय 'लली' जी अपनी माता के गर्भ में थीं उस समय उक्त परिवार का निवास मेहसाना में था, जहाँ के नयनाभिराम प्राकृतिक दृश्यों का माता पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। काव्यशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तकों के अध्ययन के फलस्वरूप आपको कविता से रुचि हो गई। अतएव इनका कविता-काल बाल्यावस्था से ही प्रारम्भ हो गया।

एक बार अपने नाना प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय पं० हनुमानदीन मिश्र राजवैद्य, रीवाँ-नरेश को (जो आपकी प्रथम माता के पिता थे) आप ने अपनी एक कविता सुनाई। इस पर उन्होंने कहा था—'काव्य

करना अच्छा नहीं किन्तु तुम्हारे उत्साह को भी रोकने की इच्छा नहीं होती।'

आपको प्रोत्साहित करने में स्वर्गीय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी अग्रगण्य थे। आपको जिन सम्माननीय कवियों की रचनाओं से रुचि थी, उनमें स्वर्गीय पं० नाथूराम शंकर शर्मा का नाम उल्लेखनीय है। स्वर्गीय पं० श्रीधर पाठक बहुधा आपकी समस्या-पूर्तियों से बड़े प्रभावित हो जाते थे। फिर तो आप सामयिक पत्रिकाओं में समस्या-पूर्ति और मौलिक रचनाएँ भेजने लगीं।

'रसिकमित्र', 'साहित्यसरोवर', 'प्रियम्बदा', 'रसिक रहस्य', 'गृहलक्ष्मी', 'स्त्री दर्पण', 'मर्यादा', 'प्रताप', 'सरस्वती', 'भारत-भगिनी', 'जाह्नवी', 'कान्यकुब्ज' तथा 'अभ्युदय' आदि में आपकी रचनाएँ प्रकाशित होती रहीं। आपको सुललित रचनाओं पर कई बार पुरस्कार तथा प्रमाणपत्र भी मिले।

आप की मानसिक स्वतन्त्रता प्रारम्भ से ही यहाँ तक बढ़ी हुई थी कि 'जाह्नवी' (चुनार) के सम्पादक पं० श्रीकान्त उपासनी कभी कभी आपकी कविताएँ यह कह कर लौटा दिया करते थे कि—'क्या पत्रिका बन्द करवा दीजिएगा।' फिर भी वह बड़े आग्रह से अन्य कविताएँ आपसे प्राप्त करते थे। यह सम्वत् १९६६ वि० की बात है।

आपका विवाह हमीर गाँव, ज़िला रायबरेली निवासी शुक्ल वंशीय पं० रघुनाथ प्रसाद जी शुक्ल के मँझले पुत्र पं० कैलाशनाथ शुक्ल बी० ए०, एल-एल० बी० के साथ सं० १९६८ वि० में सम्पन्न हुआ था। शुक्ल जी इस समय सेक्रेटेरियट के अच्छे पद पर आसीन हैं।

स्वर्गीय पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी बी० ए० का कथन था—"निहालपुर के जलवायु में कविता के अणु उपस्थित हैं। फलतः इस छोटे ग्राम में पाँच कवयित्रियों का प्रादुर्भाव हुआ।" यह बात इसी से सिद्ध है कि 'लली' जी के पुत्र पं० हरिहरनाथ शुक्ल 'सरोज' तथा उनके छोटे भाई पं० भवानी प्रसाद जी तिवारी की ज्येष्ठ पुत्री कुमारी प्रतिभा त्रिपाठी भी कविता संसार में यथेष्ठ प्रतिष्ठा पा रही हैं।

सं० १९८६ वि० में मिथिलाधिपति महाराज कामेश्वर सिंह जी, प्रधान—'भारत धर्म्म महामण्डल' ने 'लली' जी को 'साहित्य-चन्द्रिका' की उपाधि से विभूषित किया।

कुछ दिनों तक लखनऊ से निकलने वाली 'त्रिवेणी' मासिक पत्रिका का योग्यतापूर्वक सम्पादन करके आप ने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया है।

हिन्दी सदैव से भारत की अन्तर्प्रान्तीय भाषा रही है। संस्कृति और सुधार के प्रत्येक आन्दोलन का इसने नेतृत्व किया है। मध्ययुग में सन्तों ने धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध जो प्रयत्न किया उसमें भी हिन्दी का आश्चर्यजनक भाग था। तब से यह बराबर राष्ट्र की आत्मा के उद्बोधन तथा जागरण के कार्य में आगे रही। राष्ट्र के जागरण के साथ साथ यह भी विस्तृत जीवन्त और पुष्ट होती गई है।

बीसवीं सदी के आरम्भ के साथ साथ जो चेतना हमारे राष्ट्र और समाज में आई उसका श्रेय हमारे राजनैतिक नेताओं तथा कुछ धार्मिक नेताओं को भी है। इसमें हमारे कवियों और लेखकों का कम हाथ नहीं है। स्वामी दयानन्द सरस्वती का गुजराती होते हुए हिन्दी

भाषा में अपने ग्रन्थों का निर्माण, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का मध्ययुग की संकुचित संस्कृति, विजातीयता के भाव, बनावटी भाषा तथा कृत्रिम आध्यात्मिकता को हटा कर हिन्दी साहित्य में जीवन और तेज लाने का पूर्ण प्रयत्न तथा अन्य कवियों के ऐसे ही कार्य्य इस बात के द्योतक हैं। श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली' ने भी इसी प्रकार अपने समय में बनावटी भाषा तथा कृत्रिम आध्यात्मिकता से दूर रह कर वही कार्य्य किया है।

कवि का व्यक्तित्व उसकी रचना में विद्यमान रहता है। कविता की एक मुख्य विशेषता यह है कि वह समाज के जीवन की सरस व्याख्या करे। कवि इसी की सहायता से वाह्य तथा आन्तरिक जगत का निरीक्षण करता है। वह सर्वदा अपनी अमर वाणी से जनता को सचेत करता है। कविता केवल 'कला कला के लिए' नहीं होती वरन् इसका सम्बन्ध जीवन से और जीवन के लिए होता है। कविता जीवन की आलोचना है।

'लली' जी का काव्यक्षेत्र अपने ढंग का एक ही है। इनकी स्फुट कविताओं के पढ़ने से हिन्दी कविता का विकास, हमारे प्राचीन संस्कार, हमारी आधुनिक आशाएँ-आकांक्षाएँ और हमारी समस्याओं का पूर्ण विकास स्पष्ट झलकता दिखाई देता है। हमारे सम्पूर्ण जीवन का संयम और प्रतिबिम्ब, हमारी आत्मा की सच्ची रूपरेखा हमें 'लली' जी की स्फुट रचनाओं में देख पड़ती है।

वाह्य साधनों का अवलम्ब जब कला में गौण हो जाता है, और जब कला अन्तर्मुखी होने लगती है तभी वह निखर कर क्रमशः

अमल-धवल होती है। काव्य की गरिमा भी इसी में है कि वह अन्तः सौन्दर्य्य की ओर प्रवृत्त और प्रभावित हो। 'लली' जी सदैव से निकृष्ट शृंगार तथा बनावटी भावनाओं से अलग रही हैं; फलतः काव्य में प्रकाश, मृदुता, तथा शक्ति प्रदान करने में इसी से उन्हें सहज में ही सफलता प्राप्त हुई है।

इनके उच्च आशावाद, सुन्दर विचार, महान धैर्य तथा अकृत्रिम विवेचनाएँ हमें—होमर (Homer), दाँते (Dante), मिल्टन (Milton), वर्ड्सवर्थ (Wordsworth) तथा ब्राउनिङ्ग (Browning) जैसे महाकवियों की कृतियों का स्मरण कराते हैं।

इनकी 'वीरवदा' कविता में ब्राउनिङ्ग* (Browning) के विचारानुसार—हम सदा से योद्धा रहे हैं और अन्त तक रहेंगे—हमें यह ढाढ़स मिलता है:—

"कर्मवीर के कार्य्य यही हैं
कर्म क्षेत्र में हों न अधीर।"

सम्प्रति समाज में आप स्त्रियों को पुरुषों से किसी प्रकार भी पीछे नहीं देखना चाहतीं। आपने 'नारी' शीर्षक कविता में यह स्पष्ट-रूप से लिखा है—यदि तुम अबला होतीं तो तुम्हें नारी का रूप कभी भी न मिलता। क्योंकि:—

"नारी प्रकृति विजय नारी है, नारी शक्ति अपार।
जिसके हित वह अखिल अगोचर ब्रह्म हुआ साकार॥"

---

*"We have always been a fighter—one fight more the last but the best".

परदे के सम्बन्ध में आप के विचार हैं:—

"इस घूँघट ही के पट में
क्या क्या न हुआ सदियों से।"

आप बहुधा सक्रिय रूप से नारी-आन्दोलन में भाग लेते हुए अपनी लेखनी एवं कवित्व शक्ति से उत्तेजना तथा जीवन प्रदान करती रही हैं। आपकी सब से बड़ी विशेषता यह है कि इस क्षेत्र में कार्य्य करते हुए भी आप पारिवारिक धर्म्म का आदर्श अपनी आँखों से ओझल नहीं होने देतीं।

'लली' जी का कविताकाल वर्डसवर्थ (Wordsworth) तथा टेनीसन (Tennyson) के कविता-काल की भाँति बहुत बड़ा है। आप तीस वर्षों से निरन्तर लिखती आ रही हैं, और सदा समय का साथ देती आई हैं। बहुधा अन्य कवियों में यह बात नहीं मिलती। वे या तो समय के पीछे रहते हैं या आगे बढ़ जाते हैं।

'लली' जी का जन्म एक ऐसे उच्च ब्राह्मण वंश में हुआ है, जिसमें धर्म तथा भारतीय संस्कृति की प्रधानता रही है। फलतः इनके राजनैतिक तथा आध्यात्मिक विचार अन्य कवियों से भिन्न हैं। इन्होंने राजनैतिक विकास को धार्मिक रूप दिया है। महात्मा गान्धी के आदर्शानुसार यह भी राजनैतिक क्रान्ति को धार्मिक रूप में देखती हैं। इनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में देशप्रेम की भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। आपने भगवान श्रीकृष्ण का ध्यान 'उत्कण्ठा' शीर्षक कविता में अपने स्वार्थ के लिए नहीं किया है। आप माधुरी मूर्ति मोहन से उत्सुकता पूर्वक पूछती हैं:—

'मनमोहन श्याम हमारे अब फिर दर्शन कब दोगे ?'

क्योंकि कृष्ण के दर्शन मात्र से ही :—

'सुख से ही परिपूरित होगा, मिट जायेंगे क्लेश,
केवल 'लली' इसी आशा पर जीवित है यह देश ।'

आपने काव्य के उत्तमोत्तम गुणों का एकीकरण किया है। सुन्दरता, शक्ति तथा प्रेम (Beauty, Strength and Love) इन तीनों को मनुष्य के कृत्रिम हाथों ने तीन टुकड़ों में विभाजित कर दिया है। 'लली' जी ने इन तीनों को एक रूप में दिखलाया है। क्योंकि ये तीनों यदि एक नहीं किये जा सकते तो हमें मनुष्य की बुद्धि को ही विकृत मानना पड़ेगा। कीट्स (Keats) ने कहा है—'सुन्दरता तथा सत्य यही दो पदार्थ संसार में मनुष्य के जानने योग्य हैं।'†

वर्ड्सवर्थ का कथन है—'सुन्दर कविता कवि के हृदय का स्वाभाविक उद्गार है। यह उद्गार हृदय की भावनाओं के मात्रानुसार तीव्र अथवा मन्द होता है।'*

'लली' जी जन्म से ही ऐसी ऐसी परिस्थितियों में पलीं, और इनके सामने हमारे देश में ऐसी ऐसी क्रांतियाँ हुईं; जिन्होंने इनके मस्तिष्क पर अद्भुत प्रभाव डाला है। फलतः इनकी प्रत्येक कविता में हृदय के स्वाभाविक उद्गार तथा देश के प्रति दर्द का प्रवाह उमड़ पड़ा है।

---

†"Beauty is truth, truth is beauty that is all ye know on Earth, and all ye need to know".

*"All good poetry is the spontaneous overflow of powerful feeling".

आपके विषय-निर्वाचन में एक विशेषता यह है कि निकृष्ट विषयों की ओर आप का ध्यान ही नहीं जाता। इनके विषय-निर्वाचन की गम्भीरता तथा सार्थकता इनके विचारों की उच्चता के द्योतक हैं।

गत तीस वर्षों की हिन्दी साहित्य की सेवा तथा अध्ययन ने इनके व्यापक ज्ञान को इतना विस्तृत और काव्य क्षेत्र को इतना बहुमुखी और परिष्कृत कर दिया है कि सामयिक विषयों पर अपने उद्गारों का सच्चा स्वरूप दर्शाना और काव्य तथा जीवन को दूध मिश्री की तरह मिला देना उनके लिए साधारण बात हो गई है।

हिन्दी के दुर्भाग्य से अभी तक हमारी राष्ट्रीय कवयित्री 'लली' जी का एक भी संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ था। इसका कारण और कुछ नहीं केवल हमारी साहित्यिक उदासीनता और 'लली' जी का एकान्त प्रेम है।

यह संकलन न्यून होते हुए भी आपके कविता-काल के आदि से अब तक के मस्तिष्क विकास का द्योतक है। आशा है, हिन्दी संसार इसे अपना कर अपनी सहृदयता का परिचय देगा।

'लली' जी इस समय भी अपनी ललित रचनाओं द्वारा स्वदेश-प्रेम की धारा बहा रही हैं। मंगलमय भगवान् से मेरी प्रार्थना है कि वह उन्हें दीर्घायु प्रदान करें, जिससे वे उस स्वतंत्र भारत का यथार्थ दर्शन करने में समर्थ हों, जिसकी आराधना वे अपनी लेखनी-द्वारा करती आ रही हैं।

कानपुर
१५–५–३६

बरजोरसिंह 'सरल'
(साहित्यरत्न)

प्रकाशकीय वक्तव्य

मेरी बहुत दिनों से हार्दिक इच्छा थी कि स्त्री लेखिकाओं की रचनाओं का प्रकाशन प्रारम्भ करूँ। फलस्वरूप 'जागृति' को लेकर हिन्दी संसार के समक्ष उपस्थित होती हूँ। इसके लिए मैं पूज्या श्रीमती तोरन देवी शुक्ल 'लली' की आभारी हूँ जिन्होंने अपनी इन अमूल्य रचनाओं का प्रकाशनाधिकार देकर मुझे कृतार्थ किया।

पं० अमरनाथ झा वाइसचान्सलर इलाहाबाद यूनीवर्सिटी, डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' एम० ए०, डी० लिट्०, प्रयाग विश्वविद्यालय, श्री पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' तथा श्री 'नवीन' जी को हार्दिक धन्यवाद है, जिन्होंने अपना अमूल्य समय व्यय करके पुस्तकावलोकन का कष्ट उठाकर 'प्राक्कथन' लिखने तथा अपनी अमूल्य सम्मतियाँ प्रदान करने की कृपा की है। इसके अतिरिक्त लेखिका जी के पिता श्रद्धेय पं० कन्हैयालाल तिवारी, उनके पूज्यपति पं० कैलाशनाथ शुक्ल बी० ए०, एल-एल० बी० एवं स्वयं 'लली' जी के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ, जिनसे 'परिचय' लेखक महोदय श्री 'सरल' जी को 'लली' जी के जीवन की अनेक बातें ज्ञात हुईं।

अन्त में मैं श्री 'सरल' जी के साथ साथ आदरणीय पं० जगन्नाथ मिश्र, पं० रामसिंहासन जी मिश्र एम० ए०, पं० आनन्दकुमार मिश्र बी० ए० तथा 'लली' जी के सुपुत्र पं० हरिहरनाथ शुक्ल 'सरोज' की भी अत्यन्त अनुगृहीत हूँ; जिनकी सहायता से इन कविताओं का संकलन कर श्री 'सरल' जी ने इसे क्रम-बद्ध करके इसके प्रकाशन में पूर्ण सहायता प्रदान करने की अनुकम्पा की है।

आशा है हिन्दी प्रेमी सज्जन इसे अपनाकर मेरे साहस की वृद्धि में सहायक होंगे।

प्रकाशिका——

लेखिका के पिता
पं० कन्हैयालाल तिवारी

समर्पण

श्रीमान् पूज्य पिताजी के कर-कमलों में :—

दादा !

आप तो मेरी किसी बात में कभी कोई भूल पाते ही नहीं; किसी काम में कोई त्रुटि देखते ही नहीं; जो वस्तु मुझे एक बार दे देते हैं उसे फिर कभी लेते भी नहीं, परन्तु यह पुस्तिका तो आप को लेनी ही पड़ेगी।

आपने अधिक लाड़ प्यार करके स्वभाव में एक उच्छृङ्खलता सी उत्पन्न करदी है। वह यही कि जब तक आप मेरे किसी कार्य की प्रशंसा नहीं करते मेरे हृदय को शान्ति नहीं मिलती।

आपके अतिरिक्त आनन्द से गद्गद् होकर सहस्र सहस्र प्रशंसा के शब्द कह कर कौन मेरी इस भाषा-भाव-शून्य छोटी सी पुस्तिका को ले सकता है। अतः यह आप ही को समर्पित है।

आपकी

मणियाँ

लेखिका

सूची

रत्नज्योति

अमरज्योति

दीपज्योति

प्रथम संस्करण १०००

सितम्बर १६३६ ई०

मूल्य

विशेष संस्करण १_

दिव्यज्योति

हे चितचोर !

पलक उठाते ही जगती में,
तुम्हीं दीखते हो सब ओर—

हे करुणामय ! हे चितचोर !
मैं क्या जानूँ तुम किस ओर ?

यहाँ न पूजा है न ज्ञान है,
तिल भर तप या त्याग नहीं,
नाथ तुम्हारे श्री चरणों पर,
स्वार्थ रहित अनुराग नहीं,
फिर भी मुझे सदा मिलती है,
दया दृष्टि ममता की डोर—

हे करुणामय ! हे चितचोर !
मैं क्या जानूँ तुम किस ओर ?

सिहर उठें जब प्राण जान कर,
झंझा वायु झकोर यहाँ,
जब जब मन अस्थिर होता है,
लख कर सिन्धु हिलोर यहाँ,
तभी देख मृदुहास तुम्हारा,
मन होता आनन्द-विभोर—

हे करुणामय ! हे चितचोर !
मैं क्या जानूँ तुम किस ओर ?

तुम अनादि हो या अनन्त हो,
या विराट संसार तुम्हीं,
अखिल अगोचर अणुअणुवासी,
या इस उर के प्यार तुम्हीं,
कुछ भी हो आश्रय दे देना,
अपने ही चरणों की ओर—

हे करुणामय ! हे चितचोर !
मैं क्या जानूँ तुम किस ओर ?

उत्कण्ठा

मन मोहन श्याम हमारे,
अब फिर दर्शन कब दोगे ?

शबरी, गणिका, गीध, अजामिल,
सब को लिया उबार,
द्रुपद सुता की लाज बचा कर,
कर गज का उद्धार—

हे दीनों के रखवारे,
क्या मेरी भी सुध लोगे ?

भूली नहीं मधुर मुरली की,
विश्व मोहिनी तान,
नाथ आज भी जाग रहा है,
वह गीता का ज्ञान।

माता के स्नेह दुलारे,
कब कुंजों में विहरोगे ?

सुख से ही परिपूरित होगा,
मिट जायेंगे क्लेश,
केवल 'लली' इसी आशा पर,
जीवित है यह देश।

जब हे आराध्य हमारे,
हमसे फिर आन मिलोगे।

अभिलाषा

मुझ से मिल जाना इकबार।

कहाँ कहाँ मैं ढूँढ़ रही हूँ,
कब से रही पुकार॥
मुझ से मिल जाना इकबार।

नव कुसुमों की कुंजलता में,
निशितारों की सुन्दरता में,
सरल हृदय की उज्ज्वलता में,
कुसुमित दल की उत्कलता में,

कितना तुमको खोज चुकी हूँ,
जिसका वार न पार—
मुझ से मिल जाना इकबार।

सरिता की गति मतवाली में,
प्रिय बसन्त की हरियाली में,
बाल प्रभाकर की लाली में,
निशानाथ की उजियाली में,

आशावादी बन कर लोचन,
अब तक रहे निहार—
मुझ से मिल जाना इकबार।

अब देखूँगी उत्थानों में,
देशप्रेम के अभिमानों में,
वीर श्रेष्ठ के गुणगानों में,
अमर सुयश मय सन्मानों में,

दर्शन होते ही तज दूँगी,
हिय वेदना अपार—
मुझ से मिल जाना इकबार।

हे कृष्ण !

हे दीन बन्धु ! दुख दलन !
देश पर दया दृष्टि दरशाओ ।
मैं कब से रही पुकार कृष्ण,
अब एक बार फिर आओ ॥

आशा ही आशा प्रतिपल है,
उत्सुकतामय सब जलथल है,
ज्ञान अल्प है, साध प्रबल है,

व्याकुल हैं यह प्राण हरे !
अब अपने को न छिपाओ।
मैं कब से रही पुकार कृष्ण,
अब एक बार फिर आओ ।।

यही सुना है सुख-दुख सम है,
उर ममतामय, जग निर्मम है,
पथ अभेद्य है, साहस कम है,

तुम किस भाँति मिलोगे मोहन !
इतना ही बतलाओ ।
मैं कब से रही पुकार कृष्ण,
अब एक बार फिर आओ ।।

कहता कौन मरण जीवन है ?
जीवित जीवन ही जीवन है,
आत्मस्मृति जीवन का धन है,

दया सिंधु हो, दया करो प्रभु !
अब न विलम्ब लगाओ ।
मैं कब से रही पुकार कृष्ण !
अब एक बार फिर आओ ।।

प्रार्थना

तारा एक गगन में लख कर,
साहस का संचार हुआ,
चल निकले हम ध्येय प्राप्ति को,
देख चकित संसार हुआ,

किन्तु छिपाया उसे मेघ ने, तम का विकट प्रसार हुआ,
साथी सब रुक गये सरल पथ, बाधापूर्ण अपार हुआ।

पथ के काँटे बनें पुष्पवत्,
हे प्रभु ! दया दिखा देना।
मुझ अनजान पथिक को उनके
चरणों तक पहुँचा देना॥

जीवनज्योति

जय माता

जय वीर प्रसविनि विश्व-पोषिणि,
जयति मंगल कारिणी।
अज्ञान तम नाशिनि सुहासिनि,
जयति खद्दर धारिणी ।।

सुन्दर सुवेष सदैव शोभित,
जयति सब सुखदायिनी।

जय अन्न-जन पूरित दयामयि !
जयति शान्ति प्रदायिनी ॥

जय धर्म धारिणि रत्न-गर्भा,
शुभ्र ज्योति प्रकाशिनी ।
विद्या कला कौशल प्रदायिनि,
उच्च ज्ञान विकाशिनी ॥

जय पतित पावनि रिपु नशावनि,
जयति बहुबल धारिणी ।
जय जन्म भू जगवन्दिता,
जननी जयति भय-हारिणी ॥

माता का प्यार

माँ ! करके कृपा यही कह दे,
अब ध्येय हमारा क्या होगा ?

तेरे वे वीर सपूत सभी,
कर्तव्य धर्म पर अड़ते हैं।
तेरी सेवा हित अति प्रसन्न चित
असंकोच हो बढ़ते हैं।

उन कुसुम समान दुलारों का
वह स्वर गम्भीर सुना होगा ?
माँ ! करके कृपा यही कह दे,
अब ध्येय हमारा क्या होगा ?

माँ ! तुझसे मिलने को अपना
अब कोई शेष उपाय नहीं,
फिर भी दर्शन दुर्लभ से हैं
जब कोई सबल सहाय नहीं।

मैं यही सोचती हूँ जननी !
हम अबलाओं का क्या होगा ?
माँ ! करके कृपा यही कह दे,
अब ध्येय हमारा क्या होगा ?

क्या यों ही तुम निष्ठुर रह कर
निर्बल का हृदय रुला दोगी ?
अपनी इन सरल सुताओं की
ममता तुम स्वयं भुला दोगी।

यदि ऐसा ही है ठान लिया
तो लाभ तुम्हारा क्या होगा ?

माँ! करके कृपा यही कह दे,
अब ध्येय हमारा क्या होगा ?

जननी ! फिर एक बार मुसका,
माता का प्यार जता देना,
अपनी सन्तति को गोद उठा-
कर, हित की बात बता देना।

तेरा वह केवल प्यार 'लली'
मेरा अभिमान नया होगा।
माँ! करके कृपा यही कह दे,
अब ध्येय हमारा क्या होगा ?

एक प्रश्न

बतला दे मेरी दयामयी, कैसे तेरा आह्वान करूँ ?

वे लहर कहाँ हैं सागर में,
जिनके सम मधुर पुकार करूँ ?
इस वीणा में ध्वनि भी न मिली,
जिससे स्वर-मय झङ्कार करूँ।

वे पत्र कहाँ, वे पुष्प कहाँ, जिनसे तेरा सन्मान करूँ ?
बतला दे मेरी दयामयी ! कैसे तेरा आह्वान करूँ ?

व भाव कहाँ कवि की कविता में,
मैं जिसकी अनुहार करूँ ?
वे चरण कहाँ हैं ओजपूर्ण
जिन पर जीवन बलिहार करूँ ?

हैं वे पथ-दर्शक वीर कहाँ, यदि दर्शन का अनुमान करूँ,
वे अटल भक्त हैं कहाँ 'लली', जिनका मैं गर्व गुमान करूँ ?

बतला दे मेरी दयामयी ! कैसे तेरा आह्वान करूँ ?

जाग अरी

जननी फिर आज पुकार उठी,
तू जाग अरी ! अब जाग अरी !!

सोने पर भी थी जाग रही
तू चित्रित लिखित कहानी सी,
फिर कैसा यह आसव ढाला
हो रही आज दीवानी सी ।
बेसुध हैं भोले प्राण हुए,
किस निष्ठुर का अनुराग अरी !

जननी फिर आज पुकार उठी,
तू जाग अरी ! अब जाग अरी !!

इस मूक वेदना में क्या है
पागल पीड़ा की छाया में ?
केवल रोना ही रोना क्या
दुर्लभ यौवन की माया में ?
यह भी है एक प्रलाप मात्र
या अंतस्तल की आग अरी !

जननी फिर आज पुकार उठी,
तू जाग अरी ! अब जाग अरी !!

माता की एक पुकार हुई,
बढ़ चले वीर मस्ताने से,
सुख वैभव क्षण में त्याग चले,
दर्शन करने मनमाने से,
उठ, चरण-वन्दना ही करले,
उस स्वप्न देश को त्याग अरी !

जननी फिर आज पुकार उठी,
तू जाग अरी ! अब जाग अरी !!

जागृत हो, निर्भय हो, दृढ़ हो—
अब उलझ न टूटे तारों से,
यह महाविश्व झङ्कृत कर दे
अपनी सुमधुर झङ्कारों से,
जीवन कर्तव्य निभाना ही
जीवन का सफल सुहाग अरी !

जननी फिर आज पुकार उठी,
तू जाग अरी ! अब जाग अरी !!

तू परतंत्र कहाँ थी ?

मैं कैसे बन्दी हूँ जननी !
तू परतंत्र कहाँ थी ?

बन्दी कौन कहेगा उसको, वह कैसे बन्धन में ?
तेरा ही निर्मित तन जिसका, तेरा वैभव मन में।

माँ ! तू परतंत्र कहाँ थी ?

ध्येय नहीं है इस दुनिया में यों ही मर मिट जाना,
एकबार देखेंगे जननी ! विजय ध्वजा फहराना।

माँ ! तू परतंत्र कहाँ थी ?

'पराधीन हैं' कहकर मेरे उरको अब न दुखाना,
वीर-प्रसविनी तू है मेरी जननी सब ने माना।

माँ! तू परतंत्र कहाँ थी?

'लली' सरल उस वीर पुत्र को अजर अमर हो जाना,
माता के चरणों पर जाना जिसने शीश झुकाना।

माँ! तू परतंत्र कहाँ थी?

रुचता नहीं आज भी मुझको रोकर व्यथा सुनाना,
महाशक्ति के महत् रूप में तुझको ही पहचाना।

माँ! तू परतंत्र कहाँ थी?

मैं कैसे बन्दी हूँ जननी!
तू परतंत्र कहाँ थी?

अनुरोध

ओ देशप्रेम के मतवाले ! मत प्रेम प्रेम कह इतराना।

कह कर उपदेश सुनाने से
जिनका सत्कर्म प्रधान रहा।
परहित में जीवन धारण था,
परिपूर्ण अलौकिक ज्ञान रहा।
अभिमान नहीं जिन हृदयों में,
उनका जग में अभिमान रहा।

जो समझ चढ़े बलिवेदी पर,
बलिदान वही बलिदान रहा।

रणवीर! इन्हीं आदर्शों को, नित नई रीति से अपनाना।
ओ देशप्रेम के मतवाले! मत प्रेम प्रेम कह इतराना।

जिसमें लालसा प्रधान रही,
वह प्रेम नहीं वह भक्ति नहीं,
जो सहम उठे बाधाओं से,
वह वीर हृदय की शक्ति नहीं।
विचलित हो मायाजालों से
त्यागी की पूर्ण विरक्ति नहीं,
यदि स्वारथ का लवलेश रहा,
माता की वह अनुरक्ति नहीं।

दर्शन पा, आगे बढ़ हँसकर, श्री चरणों पर बलि हो जाना।
ओ देशप्रेम के मतवाले! मत प्रेम प्रेम कह इतराना।

तेरे गुण के अति मधुर गान से
जाग 'लली' संसार उठे,
तेरी वाणी सुन निर्बल जन भी
साहस से हुंकार उठे।

तेरे शब्दों की प्रतिभा पर
जब नीरवता झङ्कार उठे,
पृथ्वी से नभ तक वीर श्रेष्ठ,
तेरी ही जय जयकार उठे।

तब उच्च हृदय दृढ़ हाथों से निज कीर्ति-ध्वजा को फहराना।
ओ देशप्रेम के मतवाले! मत प्रेम प्रेम कह इतराना।

त्यागी का भाव

हे निष्ठुरते ! मत छेड़ हमें,
हम देशप्रेम मतवाले हैं ।

रजनी की इस नीरवता में,
नीरवता का कुछ भान नहीं,
है विश्ववेदना छिपी हुई,
यह कलियों की मुसकान नहीं,
कवि तेरी टूटी वीणा के
तारों में कोमल गान नहीं,

हँसते हैं, निशानाथ हँसने दो,
इसका भी कुछ ज्ञान नहीं।

हम मात्रभूमि-हित-साधन में,
हँसकर मर मिटने वाले हैं।
हे निष्ठुरते ! मत छेड़ हमें,
हम देशप्रेम मतवाले हैं।

संयोग वियोग कथाओं में,
रह गया प्रियतमे ! सार नहीं,
तू भी उठ आगे बढ़ सजनी !
हँसने रोने में प्यार नहीं,
आदेश उचित माता का है,
उसकी यह करुण पुकार नहीं,
निज जन्मभूमि पद-कमल-वन्दना,
होती है निस्सार नहीं।

अपना वह जीवनरत्न 'लली'
अब फिर हम पाने वाले हैं।
हे निष्ठुरते ! मत छेड़ हमें,
हम देशप्रेम मतवाले हैं।

स्काउट का स्वागत-गान

स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।
भारत-माता तुमको प्यारी, तुम भारत-माता के प्यारे।

धीर वीर, गम्भीर सुहावन,
पूरित सद्विचार मन भावन,
मातृ-भूमि के हिय हरषावन,
चिरंजीव भारत के वारे।
स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।

सुन्दर सद्विचार से पूरित,
दृढ़-प्रतिज्ञ, सद्गुण से प्रेरित,

जन्म-भूमि तुम पर जग वारति,
जननी मन्दिर के उजियारे।
स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।

मातृ-भूमि जग श्रेष्ठ तुम्हारी,
सुख सम्पति स्वर्गहु से प्यारी,
महिमा तीन लोक से न्यारी,
तुम से सुत आँखों के तारे।
स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।

मातृ-भूमि हित यह तन मन हो,
उसकी सेवा का शुभ प्रण हो,
धीर, साहसी, निर्भय जन हो,
मित्र सखा हों सभी तुम्हारे।
स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।

शुभ विचार हों अचल तुम्हारे,
सफल योग्य प्रण बनें तुम्हारे,
हों सहाय जगदीश्वर प्यारे,
जियो 'लली' निज कर्म सहारे,
स्वागत प्यारे बन्धु हमारे।

प्रणाम

सादर सस्नेह प्रणाम आज,
उन चरणों पर शतकोटि बार।

माता के लाल लड़ैते थे,
बहिनों के वीर बाँकुरे थे,
सौभाग्यवती के जीवन के—
जीवन, प्राणों के प्यारे थे,

वे सब की भावी आशा थे,
थे जन्मभूमि के होनहार ।
सादर सस्नेह प्रणाम आज,
उन चरणों पर शतकोटि बार ।

वे देशप्रेम मतवाले थे,
माता के चरणपुजारी थे,
पुरुषों में थे वे पुरुषसिंह,
कर्तव्य धर्म व्रतधारी थे,

प्राणों को हँसकर छोड़ दिया,
पर प्रण न तजा अपना अपार ।
सादर सस्नेह प्रणाम आज,
उन चरणों पर शतकोटि बार ।

वे ज्ञानवान थे योगी थे,
अनुपम त्यागी थे, सज्जन थे,
वे वीर हठीले सैनिक थे,
तेजस्वी थे, विद्वज्जन थे,

कर्तव्य कर्म की ओर बढ़े,
फल की सारी सुधबुध बिसार ।

सादर सस्नेह प्रणाम आज,
उन चरणों पर शतकोटि बार।

तमपूर्ण निशा में ज्योति हुए,
पथदर्शक कंटकमय मग के,
मरकर भी हैं वे अमर हुए,
आदर्श बने भावी जग के,

मंगलमय था बलिदान विमल,
ओ वीर प्रसविनी के शृङ्गार।
सादर सस्नेह प्रणाम आज,
उन चरणों पर शतकोटि बार।

अर्घ्य

दीन देश के प्राणाधार !

प्राणाधार ! दया आगार !
दीन देश के प्राणाधार !

निर्बल जन के सबल बन्धु हो,
धीर वीर हित दयासिन्धु हो,
शत्रुगणों के अजय सिंह हो,
जननी जन्म-भूमि के सेवक—

या तुम हो परहित साकार।
दीन देश के प्राणाधार!

महत् पुरुष के हृदय विमल से,
शोक नशावनि के कलकल से,
दीन दुखी के नयन सजल से,
सदा तुम्हारी ही सुन पड़ती—

विश्व व्यापिनी जयजयकार।
दीन देश के प्राणाधार!

स्नेहमयी माँ के नयनों में,
देशप्रेम मदमत्त जनों में,
देव तुम्हारे पद्पद्मों में,
बड़े यत्न से चिर संचित यह—

अर्घ्य 'लली' का हो स्वीकार।
दीन देश के प्राणाधार!

किसान

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

धीर, वीर, परसेवा में रत निशिदिन एक समान,
फिर तुम क्यों चित्रित नयनों में निर्बल दीन किसान।

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

हाँ विभूतियाँ हैं जगती की कवि, लेखक, विद्वान,
किन्तु तुम्हीं रखने वाले हो सब के जीवन प्राण !

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

तुमने जगके हेतु बिखेरा सुख, ऐश्वर्य महान,
मिला तुम्हें क्या परिवर्तन में दु:ख दारिद्रय अपमान।

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

भूल गये किस भाँति तुम्हारा त्याग मौन बलिदान,
केवल मात्र रहे तुम कैसे दुर्बल दीन किसान।

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

बहुत सहन कर चुके बन्धु अब फिर होगा उत्थान,
'लली' तुम्हें विजयी कर देंगे मंगलमय भगवान।

देश के ओ उज्ज्वल अभिमान !

कांग्रेस स्वर्ण जयन्ती

भक्त हैं, ऋणी हैं, अनुगामी हैं तुम्हारे देवि !

तुमही हमारी राष्ट्रस्वामिनी कहाती हो।

जागते हुओं की ज्योति जीवन बढ़ाती तुम,

निद्रित जनों को उसी प्रेम से जगाती हो।

रक्षिका स्वदेश की हो, शिक्षिका हो राष्ट्र की भी,

शरणागतों को करुणा से अपनाती हो।

पथ दिखलाती सिखलाती ध्येय मानवीय,

स्नेह सरसाती कांग्रेस तुम आती हो॥

त्याग त्यागियों का, अनुराग अनुरागियों का,

आशिष वचन देवताओं का ले आई हो।

प्रेम प्रेमियों का, हम सेवकों की सेवा 'लली'

स्वीकृत सहर्ष कर मन हरषाई हो।

सुस्मृति अतीत की, सुखद वर्तमान तुम्हीं,

भावी भावनाओं की प्रदीप बन आई हो।

धन्य भाग्य आज हैं हमारे, कांग्रेस तुम—

स्वर्णिम जयन्ती में सहज मुसकाई हो॥

प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो

प्यारे स्वदेश तेरी जय हो।
प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो।

तूने ही सोते भारत को निद्रा से आज जगाया है।
फिर अपने पैरों आप खड़े होने का मंत्र बताया है।
पहचान गए आज़ादी को सब यह भी तेरी माया है।
घर-घर में कोने-कोने में तेरा ही नाम समाया है।

सब की रक्षा तू आप कर,
तुमको पा कौन निराश्रय हो ?
प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो।

वह तूही है जिसमें दुनिया के जाति धर्म्म का द्वेष नहीं।
सब न्याय तुला पर तुल जावें अत्याचारों का लेश नहीं।
तू क्षेत्र बनी है वीरों की कायरता का कुछ शेष नहीं।
आगे बढ़ते ही जाना है तज इसे और उद्देश्य नहीं।

दृढ़ता से शरण गहे तेरी
आवे वह आकर निर्भय हो।
प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो।

तेरे अनुयायी के मन में धन का पद का आह्लाद नहीं।
अधिकारी होकर भी उसको अधिकारों का उन्माद नहीं।
हिन्दू मुस्लिम का भेद नहीं है छूत अछूत विवाद नहीं।
कर्त्तव्य कर्म में निरत, शेष दुनिया की उसको याद नहीं।

राजा हो अथवा रंक किन्तु
हो वीरव्रती दृढ़ निश्चय हो।
प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो।

तूने भारत की दीन-हीन जनता की ओर निहारा है।
भूखों से मरने वालों को मुट्ठी भर अन्न विचारा है।
घिर रहे अविद्या अन्धकार में क्षीण ज्योति विस्तारा है।
भारत के नभ में प्रभापूर्ण तेरा ही एक सितारा है।

चिरजीवी हो तू क्रान्ति करे
तेरी ही 'लली' दिग्विजय हो।
प्रिय कांग्रेस तेरी जय हो।

जय स्वदेश

जय जय भारत, जय जय स्वदेश।

जय शोभित सुन्दर तिलक भाल,
अति भव्य मूर्ति लोचन विशाल,
अतुलित बलधारी अति दयाल,

जय जगत शिरोमणि वीर वेष।
जय जय भारत, जय जय स्वदेश।

पूरित सुन्दर षट्ऋतु अनूप,
रक्षक पयोधि हिम शैल भूप,
जय सत्य न्याय सद्धर्म रूप,

पैंतीस कोटि सन्तति विशेष।
जय जय भारत, जय जय स्वदेश।

दृढ़ स्वास्थ्य अन्न नव वस्त्र दान,
दो निज भक्तों को भक्ति, ध्यान,
रणवीर जनों को शक्ति, मान,

हे भारत ! तव महिमा अशेष।
जय जय भारत, जय जय स्वदेश।

रत्नज्योति

प्रथम किरण

अलस भाव त्याग सजनि !
प्रथम किरण आई।

सुषमा की निधि अपार,
क्यों न उठे पलकभार,

तन्द्रावश यों निहार—
सहसा मुसकाई।
अलस भाव त्याग सजनि !
प्रथम किरण आई॥

जागृति

जाग उठा विश्व भार,
जाग उठा प्रकृति प्यार,

उषा खोल रही द्वार—
तू क्यों अलसाई ।
अलस भाव त्याग सजनि !
प्रथम किरण आई ॥

निज निज रुचिकर शृङ्गार,
जननी मन्दिर पधार,

पुलक प्रेम से सँवार—
आरती सजाई ।
अलस भाव त्याग सजनि !
प्रथम किरण आई ॥

मैं बलि सखि ! बार बार,
जागृत हो एक बार,

आँख खोल देख अरी !
नव संदेश लाई ।
अलस भाव त्याग सजनि !
प्रथम किरण आइ ॥

स्वर्ण दिवस

अब शुभागमन तेरा है;
हाँ, स्वर्ण दिवस मेरा है।

तेरा ही करते हैं निशिदिन, महत् पुरुष आह्वान,
तेरे लिये देश के अगणित, वीर हुए बलिदान—

अब मधुर मिलन तेरा है,
हाँ, स्वर्ण दिवस मेरा है।

मिल जाने ही की आशा से, की थी करुण पुकार,
पाकर तुझे सिंह की नाईं, देश उठा हुंकार—

धनि यह प्रभात तेरा है,
हाँ, स्वर्ण दिवस मेरा है।

'लली' रहे युग युग में तेरा, अचल अटल सुविकाश,
करे सकल हृदयों में तेरी, उज्ज्वल ज्योति प्रकाश—

यह अमर गान तेरा है;
हाँ, स्वर्ण दिवस मेरा है।

ध्येय

ध्येय तुम्हीं हो मेरे, मैंने
फिर भी तुम्हें कहाँ पाया ?
अपने को अतृप्त आशा में
अब तक कितना भरमाया।

धन, वैभव, सौन्दर्य सुयश भी,
और अनेकों माया भी।
देखी है, पर नहीं मिल सकी,
कहाँ तुम्हारी छाया भी।

नीरस हैं यह प्रणय कथायें,
शुष्क विरह गाथायें भी।

मुझे निरर्थक सी जँचती हैं,
मोहक मूक व्यथायें भी।

धन में देखा, जन में देखा,
वन में भी जाकर देखा,
मिलती तो कृतार्थ हो जाती,
कहीं एक धूमिल रेखा।

माया के इस महा नृत्य में
अभिमानी हुंकारों में,
नहीं छिपे हो जान चुकी हूँ,
उलझे जर्जर तारों में।

तुम्हीं न यदि मिल सके मुझे
तो मुक्ति भला क्योंकर लूँगी,
पा जाने को तुम्हें जगत में,
अपना जीवन फिर लूँगी।

जब मेरे हठ पर हो माँ का,
सहज गर्व से मुसकाना।
उस स्वर्णिभ अवसर पर मेरे,
ध्येय अचानक मिल जाना।

मैं

वे अचेतन क्यों समझते,
सजनि ! मैं तो जागती सी।

ठहर जा, टुक देख मेरे श्रान्त उर की भावनायें,
लहलहाती लालसायें, कर्मरत प्रिय कामनायें—

श्रान्त हैं, विश्रान्ति तज कर
क्रान्ति प्रतिपल माँगती सी।
वे अचेतन क्यों समझते,
सजनि ! मैं तो जागती सी॥

जल मरा सौन्दर्य्य ही पर शलभ का अनुराग कैसा ?
दे प्रकाश प्रदीप जलता ही रहा वह त्याग कैसा ?

आज मैं उस दीप पर—
अनुराग अपना वारती सी।
वे अचेतन क्यों समझते,
सजनि ! मैं तो जागती सी ॥

वेदना क्या है ? किसी सुख स्वप्न का इतिहास होगा,
आँसुओं में भी छिपा अलि ! नियति का परिहास होगा,

कौन उस परिहास पर
निज चेतनायें त्यागती सी।
वे अचेतन क्यों समझते,
सजनि ! मैं तो जागती सी ॥

मैं वही हूँ विश्व में जिसने कहीं पीड़ा न जानी,
मिट गये युग युग अमिट होती रही जिसकी कहानी,

ज्योति जिसकी आज जग में
जगमगाती जागती सी।
वे अचेतन क्यों समझते,
सजनि ! मैं तो जागती सी ॥

जिज्ञासा

सजनी ! कैसा तेरा प्यार ।

तेरा प्यार स्नेह भंडार,
सजनी ! कैसा तेरा प्यार ।

वीणा के गम्भीर स्वरों में,
सागर की अगणित लहरों में,
कुञ्जों में, रमणीय सरों में,
निशानाथ के मृदु अधरों में,

तेरा ही अनन्त विस्तार,
सजनी ! कैसा तेरा प्यार।

कभी न रूठी तुझे मनाती,
पैरों पड़ी अश्रु बरसाती,
हठ कर या मैं गले लगाती,
या निराश होकर हट जाती,

कर देती जीवन बलिहार,
सजनी ! कैसा तेरा प्यार।

ज्योत्सना में, शशि की किरणों में,
उषाकाल के ओसकणों में,
दुर्गम वन, चंचल हरिणों में,
अतुल शान्ति के सुखद क्षणों में,

तुझे देख कर मन-मयूर—
यह, नाच उठा हर बार।
सजनी ! कैसा तेरा प्यार।

उत्थान

आज फिर किस हेतु री !
वह जाग विस्मृत गान आया।

तेज सा, नवदीप्ति सा, सुप्रकाश सा, शशि सा समुज्ज्वल,
जन्म-भू के प्यार सा उपकार सा शुचि शान्त निर्मल।

प्रेम सा, उल्लास सा,
मृदुहास सा आह्वान आया।
आज फिर किस हेतु री !
वह जाग विस्मृत गान आया।

जागृति

रूप के सौन्दर्य्य से अलि ! प्रकृति से भी मधुर प्रियतर,
साधना आराधना करती रही प्रतिपल निरन्तर ।

आज किस बड़भागिनी का—
जाग फिर अभिमान आया ।
आज फिर किस हेतु री !
वह जाग विस्मृत गान आया ।

ओस के मिस डाल आँसू सहमती सी तिमिर रानी,
जा रही है, रह गई केवल कलुष जीवन कहानी ।

अब उषा अनुरागिनी का—
सहज मंगलगान आया ।
आज फिर किस हेतु री !
वह जाग विस्मृत गान आया ।

हँस उठीं कोमल कुसुम कलियाँ कसक कमनीयता भर,
गा उठी फिर कोकिला ले राग में संजीवनी स्वर ।

आरती सखि साज ले—
ऋतुराज सा उत्थान आया ।
आज फिर किस हेतु री !
वह जाग विस्मृत गान आया ।

हास्यरेखा

रोने को क्यों कहते हो, रोने में है सुख कैसा ?
मैंने हँसना देखा है, मेरा जग हँसता ही सा।

जननी मेरी प्रमुदित थी,
रजनीपति थे मुसकाये;
जब मैं जगती में आई,
दिनकर भी हँसकर आये।

हँसती थीं सखियाँ मेरी, हँसते फूलों को देखा।
आधार मधुरजीवन की, बस एक हास्य की रेखा।

सुन कर तुम भी हँस देना,
रोने का कौन बहाना।
जीवन में जीवनधन को,
हँसकर ही तो पहिचाना।

है अमिट हृदय पर मेरे, उनका कह कर मुसकाना—
निज जन्मभूमि हित में ही, सखि! हँसकर मर मिट जाना।

जीवन के दुर्गमपथ में,
है बाधाओं का आना।
भयभीत न मन में होना,
हँस कर आगे बढ़ जाना।

सिद्धान्त सरोज खिला हो, जीवन प्रतिभा मुसकाये;
हँसती सी मेरी दुनियाँ, मेरा अपनापन पाये।

मैं उस पर न्योछावर हूँ,
जिसने यह व्रत ही ठाना।
जग के रोते जीवों को,
हँस हँस कर गले लगाना।

निश्चित हो जब जीवन की अन्तिम घड़ियों का आना—
मेरे आराध्य! तभी तुम हँस कर दर्शन दे जाना।

चित्रकार

क्यों मौन हुए निस्तब्ध हुए
क्यों उदासीन हे चित्रकार !
अब छोड़ बन्धु आलस्य अरे !
जननी को है तेरी पुकार।

तू धीर, गुणी गम्भीर प्रकृति
आदर्शों का निर्माता है,
किस सुख तन्द्रा में लीन हुआ,
उठ आँख खोल हे कलाकार !

कवि प्रणय कथा पर मुग्ध हुए,
गायकजन विरह व्यथाओं में,

अब कुसुम तूलिका उठा बन्धु,
दिखला रंगों का चमत्कार।

क्षण में परिवर्तन कर देगा
तू प्रकृति ब्रह्म का प्रेमी है,
तू श्री चरणों का सेवक है
तुझ पर ही है माँ का दुलार।

मन उलझ चुका उलझी लट में
कह सुधा हलाहल घूँट चुके।
अब जीवन के सद्‌भाव जगाकर
खोल हृदय का शान्ति द्वार।

इस मोह तिमिर आच्छन्न जगत में
प्रखर किरण सी ज्योति जगे,
रह योगी-जन सा मौन बना
सिखला दुनियाँ को सदाचार।

हे युग के परिवर्तनकारी!
युग युग में तेरा सुयश रहे,
यदि माँ प्रमुदित हो जाय
'लली' तुझ पर दूँगी सर्वस्व वार॥

चित्र

चतुर चितेरे हृदय-पटल पर
अङ्कित कर दो ऐसा चित्र,
जिसमें देख सकूँ जगती के
अगणित अनुपम भाव पवित्र।

मधुर उषा की लाली लेकर
वसुधा की हरियाली लेकर
नवल नीलिमा नभ से लेकर
चोखे रंग मिलाना मित्र।

चपला का चंचल कम्पन हो,
शान्त जलधि का सा स्थिर मन हो,
मधुवन ही सा सुन्दर वन हो,
मोहन का मनहरण चरित्र।

शैशव की भोली उत्सुकता,
युवकों की निर्मल भावुकता,
वृद्धजनों की गुण-ग्राहकता,
गुरुओं का आदेश पवित्र।

वीर भीष्म की बाण सेज हो,
सतियों का सा अटल तेज हो,
किसी स्वदेश भक्त की दृढ़ता—
का उज्ज्वल आदर्श चरित्र।

'लली' मनोभावों के बिखरे
रत्नों का देखूँगी चित्र,
मेरे प्रगति-शील जीवन को,
कर दो मेरे मित्र सचित्र।

कली से

कलिका तू मुझ पर मुसकाई मैं पग पग पर भूली,
हाँ भूली फिर भूली।

छिप कर धीरे से आई थी भय लज्जा से मौन,
शूलों में भी बिहँस रही है छलनामयि! तू कौन?
मैं भूली, फिर भूली।

अमिट रहे इस अंतस्तल में तेरा यह मुसकाना,
इस निर्मम जग में तूने ही विंधकर हँसना जाना।

मैं भूली, फिर भूली।

सजनि! बता दूँ मैं भी, कैसा यह स्वर्णाभ संसार,
इसे परखने मैं आई थी पाई केवल हार।

मैं भूली, फिर भूली।

आदि न अन्त अचल अस्थिर है अद्भुत यह उद्यान,
कहाँ 'लली' पायेगी कलिके! तेरी सी मुसकान?

मैं भूली, फिर भूली।

'मैं' 'तू' का यदि भेद न रहता होती तेरे पास,
तुझे देख कर ही पा जाते सब मेरा आभास।

मैं भूली, फिर भूली।

नाविक से

नाविक ! रहने दे इसी पार ।

आकाश, धरा, जल, रवि, शशि की,
छबि प्रियतम के संग लूँ निहार ।

नाविक ! रहने दे इसी पार ।

जलनिधि की नवल ललित लहरों
को लहर लहर लहराने दे ।
बन तरुण हृदय की भावुकता
जग जीवन का यश गाने दे ।

यदि वे उत्ताल तरंग बनें,
करुणा कर ले तरणी सम्हार।
नाविक ! रहने दे इसी पार।

बन, बाग, सरित, सर निधियों
से पूजा का थाल सजाने दे।
नैवेद्य, आरती, धूप सहित
माता मन्दिर तक जाने दे।

कुछ ज्ञान भक्ति पा जाने दे,
संसार सुना है, है असार।
नाविक ! रहने दे इसी पार।

जो बिछुड़ गईं सखियाँ मेरी
उनसे अब फिर मिल जाने दे।
हैं तन्द्रालस में बन्धु 'लली'
जागृति भेरी बज जाने दे।

नादान ! मुझे सुन लेने दे,
क्या कहती है जननी पुकार।
नाविक ! रहने दे इसी पार।

मेरे छोटे निर्बल उर में,
अद्भुत साहस आ जाने दे,
कुछ तो उनकी सुन लेने दे
अपनी भी आज सुनाने दे।

आशीर्वाद प्रिय माता का,
ले लेने दे अंचल पसार।
नाविक! रहने दे इसी पार।

गायक

गायक ! अलाप फिर वही तान।
जिससे मैं इतना जान सकूँ,
मेरा प्रियतम कितना महान।

मैं नहीं सुनूँगी रजनी के,
नीरव रोदन का करुण गीत,
क्यों व्यर्थ निराशावाद सुना,
तू आकर्षित कर रहा मीत।

मैं नहीं चाहती संध्या के,
युग युग का जर्जर प्रणयगान,
हाँ मधुर उषा आगमन सुना,
कैसा होगा कञ्चन विहान।

गायक! अलाप फिर वही तान।
जिससे मैं इतना जान सकूँ,
मेरा प्रियतम कितना महान।

मैं योगिनि हूँ न वियोगिन हूँ,
जगती की दुखिया नहीं मीत,
इन सुखद अमर आशाओं ने,
सारे जीवन को लिया जीत।

जीवन घट में जागृति भर लूँ,
कर सकूँ ध्येय का उचित मान,
फिर से अलाप तू वही तान,
मेरे गायक! अनुरोध मान।

गायक! अलाप फिर वही तान।
जिससे मैं इतना जान सकूँ,
मेरा प्रियतम कितना महान।

द्विविधा

इनकी निरुपम छवि मैं देखूँ,
या उनके उर का उच्छ्वास ?
इनका सुखमय गान सुनूँ मैं,
या उनका दुखमय इतिहास ?

मुग्ध भाव देखूँ मैं इनका,
या उनका प्रदीप्त अभिमान ?
बहूँ मधुर स्मृति में उनकी मैं,
रक्खूँ या उनका सन्मान ?

ये न सहें चोटें चितवन की,
वे न सहें माँ का अपमान।
यह आहुति है मधुर प्रेम की,
वह वीरों का है बलिदान।

यह पागल प्रेमीजन करते,
मूक वेदना का आह्वान।
सुनरी सुन! उस ओर किसी का,
अमर हो रहा जीवन गान।

'लज्जी' नये क्षण हैं द्विविधा के,
क्या सुन लूँ या क्या देखूँ?
अब पीछे फिर कर देखूँ मैं,
या आगे बढ़ कर देखूँ?

अब न सुना मुझको कुछ—
सजनी! आकुल हो जाऊँगी आप।
इस कोलाहलमय जगती में,
क्षण भर रहने दे चुपचाप।

अभ्युदय

सखि ! देख उषा का भान हुआ,
रजनी का अब अवसान हुआ,
दिनमणि का स्वागतगान हुआ,
यह सुन्दर स्वर्णविहान हुआ;
उठ देख, प्रकृति का नया साज,
आया जीवन अभ्युदय आज ।

प्रेयसि का रूप बखान चुके,
गा निष्ठुरता का गान चुके,
उस रूपराशि को जान चुके,
जीवन-महत्त्व पहचान चुके,
रच रहे प्राण नूतन समाज,
आया जीवन अभ्युदय आज।

संकट पर संकट झेल चले,
बाधाओं से हँस खेल चले,
भय आलस दूर ढकेल चले,
प्रिय स्वाभिमान उर मेल चले,
नवआशाओं का सजा साज,
आया जीवन अभ्युदय आज।

जगती की छवि अद्भुत निहार,
गा रही कोकिला बार बार,
कर रही प्रकृति सुन्दर शृङ्गार,
जग उठा अचानक सुप्त प्यार,
पा ऋतुपति का सुमधुर सुराज,
आया जीवन अभ्युदय आज।

आराध्य

अपनी छवि ले नयनों में
इस हेतु बसे रहते हो,
मैं देखूँ इस दुनियाँ को
देखूँ पर देख न पाऊँ।

उस सुखद स्नेह करुणा से
इस भाँति बाँध रखते हो,
बंदी होकर बंधन पर
अभिमान करूँ इतराऊँ।

इन छोटे से प्राणों में
मृदुहास बने रहते हो,
यह विरह व्यथा गाथायें
सुन कर न समझने पाऊँ।

उपवन का पुष्प अछूता
तुम सौरभ बन कर आये,
अपने में ही खिल खिल कर
अपना मन मत्त बनाऊँ।

आराध्य ! हृदय में मेरे
रखते हो शीतल छाया,
तब इस अभेद्य जगती में
मैं किसे ढूंढ़ने जाऊँ।

अब 'लली' सुखी जीवन की
कामना यही शुभ करना,
मैं रोती सी आई थी,
मुसकाती-सी उठ जाऊँ।

अमर ज्योति

वह शैशव में छिप कर आया,
मन मुग्ध हुआ जग हरषाया,
नव आशाओं का केन्द्र बना,
तब थी मैं उसकी मधुर ज्योति।

सखि! फिर वह क्या बनकर आया,
जब बल वैभव निज दरशाया,
यह चकाचौंध सा विश्व हुआ,
तब थी मैं उसकी प्रखर ज्योति।

नयनों में थी किसकी लाली,
यह प्रकृति हुई थी मतवाली,
वसुधा ने मधुर सुधा पा ली,
तब थी मैं उसकी अमर ज्योति।

सखि! क्षण भर का उपहास हुआ,
ज्योत्सना का सुप्रकाश हुआ,
उसका शशि में आभास हुआ,
मैं शीतल सस्मित सुघर ज्योति।

जब स्वर्ण प्रभात निकट आया,
जग जाग उठा प्रमुदित धाया,
स्वागत का साज सजा लाया,
मैं मधुर ज्योति मैं प्रखर ज्योति।

मैं हूँ बस उसकी अमर ज्योति।

कौन ?

कौन हो कमनीय सी तुम ?

घिर रहीं काली घटायें,
गरजते घन घोर रव कर।
छिप गई सुकुमार ज्योत्सना,
छिप गये नक्षत्र सुन्दर।
कालिमामय नभ हृदय में,
चमकती असि धार सी तुम !

पवन भी उनमत्त था,
सुन सुन भयानक गर्जनायें।
कुछ न सूझ सके धरा पर,
भय विकम्पित थीं दिशायें।
निविड़तम पूरित जगत को,
ज्योति की आधार सी तुम।

डगमगाते वीर तरुवर,
काँपती कोमल लतायें।
सरित सर होकर विकल,
पथ ढूँढ़ते किस ओर जायें।
विश्व की भय विकलता पर,
सजनि! फिर फिर क्यों हँसीं तुम।

हो सहज करुणामयी असि-
धारिणी या कालिका हो।
खेलती या नभ विहारिणि,
सरल चंचल बालिका हो।
या सघन घन की सुहागिनि,
सुघर सुस्मित प्रेयसी तुम।

कौन हो कमनीय सी तुम?

मिलन

एक ज्योति तेरे चरणों में, एक ज्योति का उर आवास।
ज्योति ज्योति में मिली अरे ! फिर कहाँ रहा दो का आभास।

कहा किसी ने तू है मैं हूँ,
है यह मायावी संसार।
इस जन रव में भूल न पगली !
अपना पंथ आप निर्धार।

यहाँ सुमन में कीट छिपे हैं, यहाँ प्रीति में है उपहास।
अरे! यहाँ लिख सका न कोई अमर ज्योति का वह इतिहास।

तनिक ठहर अब रोक न मुझको
मैं सचेत हूँ मतवाली।
अनायास इस क्षण में मैंने
जीवन ज्योति यहाँ पा ली।

मुझे देख लेने दे जीवन देखूँ जगती का उल्लास।
ज्योति ज्योति में मिले देख लूँ मैं अपने प्रिय का मृदुहास।

नवयुग

यही सोचती हूँ हे नवयुग !
कैसी होंगी तेरी वे नई लहर की घड़ियाँ।

जब सब के हृदयों में होगा,
सहज आत्म अभिमान,
जब सब भाँति प्रदर्शित होगा,
माता का सन्मान।

जब टूट चुकेंगी सारी—
इस दृढ़ बंधन की कड़ियाँ।

यही सोचती हूँ हे नवयुग !
कैसी होंगी तेरी वे नई लहर की घड़ियाँ।

मातायें होंगी जीवन में,
ज्योति जगाने वाली,
जब शिशुओं के मुख पर होगी
स्वतंत्रता की लाली।

जब समय आप पहनेगा,
सुन्दर मोती की लड़ियाँ।
यही सोचती हूँ हे नवयुग !
कैसी होंगी तेरी वे नई लहर की घड़ियाँ।

'लली' विश्व में गूंज उठेगा,
अमर राष्ट्र का गान,
जिसके प्रति शब्दों में होगा,
देश धर्म का ज्ञान।

नवयुग तब मैं देखूँगी,
वे तेरी सुख की घड़ियाँ।
यही सोचती हूँ हे नवयुग !
कैसी होंगी तेरी वे नई लहर की घड़ियाँ।

उलझन

चतुर खिलाड़ी रंग मंच पर,
तूने यह क्या खेला,
उलझ गईं कितनी पहेलियाँ,
सुलझाने की बेला।

जाग उठी तेरे अभिनय से,
उर की अंतर्ज्वाला,
तनिक ठहर जा मुझे बता दे,
कौन बुझाने वाला।

आदि नहीं मैंने देखा था,
अन्त नहीं कुछ जाना,

मुझ अपरिचिता का चकृत मन,
क्यों होता दीवाना।

'तू स्थिर है' कह कर कानों में,
था किसने फुसलाया,
यहाँ निरन्तर कर्मशील है,
अद्भुत तेरी माया।

आने वाला मत्त बना है,
प्रमुदित जाने वाला,
स्वयं भटकता, देख रही हूँ,
राह बताने वाला।

सुनती थी अथाह तम-सागर,
आज हुआ मतवाला,
प्रखर प्रकाश प्रस्फुटित देखा,
जिसका अमिट उजाला।

दिखला दे दिखला दे अपना,
अभिनय आज निराला,
हो जीवन मदिरा या विष हो,
या अमृत का प्याला।

अभिनय

यह दुनियाँ रंगस्थल है,
सखि! जीवन ही है अभिनय,
जीवन में मैंने देखी,
कितनी ही विजय पराजय।

ओ चतुर खिलाड़ी मेरे!
कैसा यह अभिनय तेरा,
जीवन भर जिसको देखा,
क्षण प्रति क्षण ही मायामय।

देखा है वे सुध सीं हो,
इतना भी जान न पाई,
सुख सिन्धु यहाँ लहराता,
या करुणा ही है निर्भय।

हाँ फिर भी पूछ रही थी,
पर यह किसने बतलाया,
तमजाल जगत जीवन या,
विस्तृत पथ है ज्योतिर्मय।

मत ठहर 'लली' पल भर भी,
केवल आगे बढ़ती जा,
जीवन का ध्येय यही है,
जीवन ही तो है अभिनय।

अमरज्योति

मीरा

प्रेम की सीमा पर उस ओर,
प्रेम ही का घन-गर्जन घोर;
श्याम-छवि में आनंद विभोर,
नाचता था मीरा-मन मोर ।
यहाँ राणा उर में सन्ताप,
प्रेम था पुण्य प्रेम था पाप ।

जिसे दुनियाँ कहती है क्रान्ति,
चकित हो जिसे समझती भ्रान्ति,
वही मीरा की सुखमय शान्ति,
कर गई आज चौगुनी कान्ति;
कहाँ था सती धर्म का माप,
वही वरदान वही अभिशाप।

ध्येय का पाना ही था धर्म,
सहन करना था जिसका कर्म;
प्रेम ही बना धर्म वा कर्म,
समझ पाया किसने यह मर्म;
देखता रहा जगत चुपचाप,
प्रेम था पुण्य प्रेम था पाप।

आपदायें थीं चारो ओर,
किया जगती ने व्यंग कठोर;
गया था किन्तु कौन उस ओर,
जहाँ था मीरा का चितचोर;
प्रेम के बंदी वे प्रभु आप,
भक्त को मिला कहाँ सन्ताप।

किसी कवि की रचना को तोल,
मिला कब कवि-जीवन में मोल;
'लली' जग ने देखा दृग खोल,
दे गई मीरा रत्न अमोल;
जा मिली श्री चरणों से आप,
शेष हो गया हर्ष परिताप।

अमर मीरा का क्या गुणगान,
रहेगा युगयुग में सम्मान;
भक्ति का है आदर्श महान,
हमें भी है इसका अभिमान;
लगन को जो न समझता पाप,
उसे मिलता यश गौरव आप।

महारानी अहिल्याबाई

अबला कहा के मान रख लिया मालवे का,
नीति से ही शत्रु का हृदय दहला गयी।
राजनीति में भी दृढ़ प्रेम ही की नीति मान,
दान धर्म्म सत्य की छटा सी दिखला गयी।
शीत से ठिठुरतों को कम्बल करोड़ों दिये,
तृषितों को नीर अन्न भूखों को खिला गयी।
दया से प्रजा भी वश होती किस भाँति यह,
राज-मद-मत्त शासकों को सिखला गयी।

विन्ध्याचल गिरि पर सड़क बना के एक,
चोटी पर सुदृढ़ क़िला भी बनवाया था।
द्वारिकापुरी से जगदीश धाम तक कहीं
मन्दिर कहीं पै धर्म्मशाला खुलवाया था।
दच्छिण के मन्दिरों में मूर्ति नहलाने हेतु,
दूर से पवित्र गंगा जल पहुँचाया था।
पीड़ित प्रजा की बात ध्यान देके सुनती थी,
साधुओं के हेतु सदाव्रत बँटवाया था।

जुते हुए पशु को पिलाते जल सेवक थे,
नदी में मछलियों को अन्न पहुँचाती थी।
कितनी दया थी उस ममतामयी में अहा!
पच्छियों के हेतु बड़े बाग़ लगवाती थी।
सभी जीव जन्तुओं से रखती समान प्रेम,
सुविधानुसार उन्हें कष्ट से बचाती थी।
होलकर वंश की अहिल्या महारानी महा—
अन्नपूर्णा सी निज छवि दरशाती थी।

शासन की उनकी व्यवस्था अद्वितीय रही,

'लली' आज भी तो 'रामराज्य' कहलाता है।

अपनी प्रशंसा फिंकवा दी नदी नर्मदा में,

जग मुग्ध हो के दूना सुयश सुनाता है।

केवल अहिल्या महारानी जी के जीवन में,

योग, तप, ज्ञान, धर्म्म सब दिखलाता है।

काशी भूत-भावन की पावन पुरी में आज,

घाट मणिकर्णिका उन्हीं का यश गाता है।

श्रद्धाञ्जलि

आचार्य्य द्विवेदी जी के प्रति :—

अञ्जलि भर श्रद्धा हो सकती, क्या उन चरणों को उपहार ?
जिनके हित साहित्य-जलधि से, उमड़ पड़ी है अविरल धार।

क्या कह कर हे देव ! तुम्हारा
आज करूँ कैसा सम्मान ?
प्रगतिशील-हिन्दी-अणु-अणु में
व्याप्त तुम्हारा ही गुणगान।

महावीर थे तुम्हें मिला था सरस्वती का पूर्ण प्रसाद।
पाकर जिसे दूर करना था हिन्दी का निद्रा उन्माद।

उसी समय जब सुना रहे थ
सरस्वती का मधुमय गान।
हुआ अंकुरित इस कन्या के
उर में भी हिन्दी अभिमान।

श्री 'शंकर' जी की रचनायें, करती थीं आनन्द विभोर।
मन रहता था देव तुम्हारे शिक्षामय पत्रों की ओर।

वे मेरे गुरुदेव, प्रदर्शक
पथ के तुम हे देव! महान।
तुम दोनों ने मुक्त हृदय से
दिया स्नेह करुणा का दान।

बालकपन के वे स्वर्णिम क्षण वह मन का उत्साह विचित्र,
कभी समय फिर खींच सका क्या उस युग का वह अद्भुत चित्र ?

'सरस्वती' के अक्षर अक्षर
मन पर अंकित हो जाना,
पत्र तुम्हारा मेरा अपना
नवजीवन का था पाना।

आज हो उठी हैं सजीव सी जीवन की वे कुछ बातें।
खेल चुका है काल बली जब हा! अपनी निष्ठुर घातें।

तुम हो अमर, देव इस मन को
इतना ही विश्वास रहे।
क्यों कहता निष्ठुर जग मुझसे—
'आज द्विवेदी जी न रहे !!'

पाकर जननी जन्मभूमि भी जिसे हुई थी बड़भागी।
वीर नहीं वे महावीर थे अनुपम त्यागी वैरागी।

क्या यह सच है ! आज नहीं हो,
हे गुरुवर ! आचार्य महान,
मुझे बता दो फिर यह क्या है
प्यारी हिन्दी का उत्थान ?

जब तक हैं हिन्दी कवि लेखक, जब तक है हिन्दी का प्यार,
तब तक तुमको आँख बन्द कर देख सकेगा यह संसार।

बीज तुम्हारा ही बोया है
जिसका अंकुर शतदल धार,
शाखाओं में फल फूलों में
करता है नित नवविस्तार।

जिसकी सुन्दर सुखद छाँह में हिन्दी का विश्राम रहे,
अरे निठुर तुम क्यों कहते हो आज द्विवेदी जी न रहे !!

रुको रुको आँखों के आँसू !
करो न आज अनर्थ महान,
गुरु को श्रद्धाञ्जलि देती हूँ
लेकर शैशव की मुसकान।

जिनका शिक्षामूल यही था अपने पर निर्भर होना,
व न कहीं कुंठित हो जावें, देख हमारा यह रोना।

जिनकी विरह वेदना से है
पागल सा हिन्दी संसार,
रुको रुको तुम कहाँ ले चले,
ओ पागल मन के उद्गार।

बाधायें कितनी हों पथ में पर भयभीत नहीं होना,
समय सदा बहुमूल्य निरर्थक क्षण भर भी न इसे खोना।

जिनका प्रिय आदर्श यही था
जिनका यह सिद्धान्त महान,
जिनके जीवन में चित्रित था,
हिन्दी—हिन्दू—हिन्दुस्तान।

जिनके हित साहित्य-गगन से बरस पड़ी श्रद्धा की धार,
अञ्जलि भर श्रद्धा हो सकती, क्या उन चरणों को उपहार।

महात्मा गाँधी

हिन्द देश के प्राणाधार !

गाकर सद्गुण गान तुम्हारा,
आज कौन पा सकता पार।
हिन्द देश के प्राणाधार !

जब न जान पाया था कोई,
अपने उर की सहज व्यथा,
दलित देश के दुर्गतियों की
बनी हुई थी एक कथा,

किया तुम्हीं ने अनायास ही
एक विश्वव्यापी झङ्कार—
हिन्द देश के प्राणाधार !

जीवन ज्योति जगादी तुमने
जिसका कुछ आभास न था,
उसी मंत्र से दीक्षित करके,
जो भारत के पास न था,

तुम्हीं शान्ति के अमर पुजारी
जन्मभूमि के नव शृङ्गार—
हिन्द देश के प्राणाधार !

हो प्यारे स्वदेश के मोहन !
कर्मवीर सिरताज तुम्हीं,
योगिराज हो सौम्य शान्त हो,
धीर तपस्वी आज तुम्हीं,

देव ! तुम्हारी अमर देन का
ऋणी रहेगा यह संसार—
हिन्द देश के प्राणाधार !

शान्ति अहिंसा प्रेम धर्म का
प्रति उर में अनुराग रहे,
चिरजीवी हो महाशक्ति तुम
सफल तुम्हारा त्याग रहे,

'लली' गूँजती रहे जगत में
सदा तुम्हारी जयजयकार—
हिन्द देश के प्राणाधार !

जवाहरलाल

मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

सुनती हूँ थे सम्राट तुम्हीं,
पर मैंने देखा दीन वेष !

मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

प्रिय कहता तुमको दीन कौन !
सुनकर मैं कैसे रहूँ मौन !
जिसका धन रत्न जवाहर है—,

अगणित रत्नों में वह विशेष।
मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

बाधायें जिसकी बालसखी,
आपत्ति जिसे आनन्दमयी,
प्रिय भारत की हित रक्षा में—

जिसको सुखमय नित नये क्लेश।
मेरे भारत !—मेरे स्वदेश !

हाँ उसको कैसे क्लेश भला,
जिसकी चिर संगिनि है 'कमला',
जो आत्मतत्व का ज्ञाता है—

वह भारत है जिसका स्वदेश।
मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

माता आशा पर मुसकातीं,
बहनें उस क्षण पर बलि जातीं,
जब 'लली' देश ने देख लिया—

उस वीर बन्धु का वीरवेष।
मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

हे राष्ट्र ! तुम्हें शत शत प्रणाम,
अनुकूल तुम्हारे रहें राम,
हो 'विजयलक्ष्मी' की ममता—

हैं अद्भुत तेरे रत्न शेष।
मेरे भारत ! मेरे स्वदेश !

दीपज्योति

लेखिका की माता
स्वर्गीया भाग्यवती देवी जी

मेरी अम्माँ

एक बार यदि इस जीवन में,
फिर तुम को पा जाऊँ माँ!
कितनी व्यथा सहन करती हूँ,
हृदय खोल दिखलाऊँ माँ!
चरण छोड़ कर उस उदार
वक्षस्थल से मिल जाऊँ माँ!
तव वर्जन पर ध्यान न देकर,
शत शत अश्रु बहाऊँ माँ!

एक बार फिर मधुमय वाणी,
श्री मुख से सुन पाऊँ माँ !
अपने उर की, असह वेदना,
क्षण में ही विसराऊँ माँ !
गोदी चढ़ कर, हँस कर, रोकर,
अब तुमको न सताऊँ माँ !
बड़े यत्न से तव सेवा कर,
जीवन सफल बनाऊँ माँ !

भैया को तो अनायास ही,
किया मातृ ऋण से उद्धार।
अन्त समय में मेरी सेवा,
जननी हुई न क्यों स्वीकार।
छोड़ चलीं असमय में ही क्यों
अपना प्राणोपम परिवार।
सुख से था परिपूर्ण तुम्हारा,
छोटा सा सुवर्ण संसार।

जननी ! तुम चढ़ चलीं चिता पर,
जब सोलह श्रृङ्गार किये।
कमल सदृश दृग बंद किया,
क्यों लखा न अन्तिम प्यार लिये।

जिसका हृदय पूर्णता पाता
था तुम पर अभिमान किये।
प्रेम तुम्हारा खोकर जननी!
अब जग में किस भाँति जिये।

रोते हुए पुत्र को छोड़ा,
इस अचेत कन्या का ध्यान।
अर्धविमूर्छित पति को छोड़ा,
जननी ! यह कैसा प्रस्थान!
गौरव की प्रतिमूर्ति सती थीं,
जिनका जीवन था अम्लान।
हा ! मेरी सुकुमारी माता,
किया कहाँ किस ओर पयान।

उस अनन्त पथ का कुछ भी
जो आज पता पा जाऊँ मैं।
'पहिले मैं जाऊँगी' कह कर,
जननि ! तुम्हें ले आऊँ मैं।
जीव रहे जब तक इस तन में,
तुम सा ही सुख पाऊँ मैं।
अन्त समय में मेरी अम्माँ!
तुम में ही मिल जाऊँ मैं।

भैया

हे आशाओं के नये साज,
हे नवयुग के उन्नत समाज।
जननी अंचल के सहज लाज,
बाधूँगी राखी वीर आज।

अक्षत रोली मंडित विशाल,
जगती में उन्नत रहे भाल।
मेरी माता के सुघर लाल,
उर पर शोभित हो विजयमाल।

रक्षा हित शक्ति निकट आयें,
आती बाधायें हट जायें।
पथ के द्रढ़ बंधन कट जायें,
जिस पथ से वीर सुभट जायें।

तेरे यश का विस्तार रहे,
माँ के चरणों पर प्यार रहे।
जग को तेरा आभार रहे,
निर्बल हित हृदय उदार रहे।

बहिनों के उर का सुखद साज,
मेरा भइया सिरताज आज।
रख, देश धर्म की पूर्ण लाज,
बाधूँगी राखी बन्धु आज।

रक्षा बंधन

मेरी माँ के हृदय लाड़ले,
ओ मेरे प्यारे भाई!
देखो आज तुम्हारे हित मैं
रक्षा बंधन ले आई।

स्वागत मेरी जीवन प्रतिभा,
स्वागत प्राणों की आधार,
स्वागत मेरी बहिन लाड़िली,
दूँ सर्वस्व तुझी पर वार।

लाई है तो दे सहर्ष दे,
देखूँ तेरा धन कैसा,
मैं तेरा उन्मुक्त वीर हूँ
पगली ! यह बन्धन कैसा ?

यह बन्धन है स्नेह, शान्ति-
शुचि सद्भावना जगाने को।
शीघ्र बाँध दूँ कर कमलों में,
विजयी वीर बनाने को।

जितनी शुभ कामना तुम्हारी,
विश्व प्रेम के छोरों में,
वह सब आज निहित होती हैं,
पीत अरुण इन डोरों में।

जीवन कथा

ठहरो ! ठहरो ! निज जीवन की
सुन्दर कथा सुनाऊँ मैं ।

नवकलिका जैसी शैशव में सौरभ युत सुन्दर सुकुमार,
जिसके चारों ओर भ्रमर बन मँडराता रहता था प्यार ।
नहीं जानती मैं सुन्दर थी या सुन्दर सारा संसार,
जब क्षण प्रति क्षण में होता था नित नवीन सुख का विस्तार ।

उन अमूल्य अनुपम घड़ियों की
बार बार बलि जाऊँ मैं ।

ठहरो ! ठहरो ! निज जीवन की
सुन्दर कथा सुनाऊँ मैं ॥

फिर देखा जीवन बसन्त में भरी छलकती प्याली थी,
इस अगाध संसार सिन्धु में मैं सरिता मतवाली थी।
इच्छा, अभिलाषा, आशाओं की भावना निराली थी,
दुर्लभ, अमिट, अनन्त, अलौकिक सुख सुहाग की लाली थी।

यही कामना रही कभी वह
रूठें और मनाऊँ मैं।
ठहरो ! ठहरो ! निज जीवन की
सुन्दर कथा सुनाऊँ मैं ॥

कृपासिंधु की अतुल कृपा का जब परिचय मैंने पाया,
अखिल विश्व के सरल प्रेम को सहज हृदय से अपनाया।
मधुर अमिय सुन्दर सरोज सा इस जीवन का फल पाया,
जिस पर सदा रहे केशव की कृपा दृष्टि शीतल छाया।

जिसे गोद में ले जननी पद-
गौरव का सुख पाऊँ मैं।
ठहरो ! ठहरो ! निज जीवन की
सुन्दर कथा सुनाऊँ मैं ॥

जाग्रति

कहो बन्धु ! अब क्या कहते हो,
कब तक मुक्त करोगे इन घूँघट की कड़ियों से ?

हम दुर्बल दीन मलीन हुईं,
सुख, शांति, स्वास्थ्य, बलहीन हुईं,

हा ! परदे ही परदे में—
मिलतीं अन्तिम घड़ियों से ।

क्या शान्ति चाहते हो तुम,
गृहिणीगण को फुसला कर।
बन्धन कैसे रख लोगे,
उस क्षण भी उन्हें भुला कर—

जब प्रतिहिंसा का भाव
उठेगा झूम सभी हृदयों से।

अब भी यदि रखना चाहो,
दृढ़ सदाचार सुविचार।
कर दो दूर आज परदे सा,
अन्तिम अत्याचार—

इस घूँघट ही के पट में
क्या क्या न हुआ सदियों से।

बना आज कर्त्तव्य तुम्हारा,
जगना और जगाना।
बिखर गईं जो विमल शक्तियाँ
फिर से उन्हें मिलाना,

देखो प्रस्तुत हो जाओ
सद्साहस शुभ घड़ियों से।

परिचय

अपने अतीत का गुण गाऊँ,
बीते वैभव पर हर्ष मना।
या वर्तमान पर मौन रहूँ,
सुन्दर कर्तव्य समझ अपना।
या युग के भावी चिन्तन में,
जीवन उत्सर्ग करूँ अपना।
अब तुम्हीं बता दो क्या कह दूँ,
जब समय आप संघर्ष बना।

हाँ उसी वंश की हूँ जिसमें,
हो कर साकार स्वयं आईं ।
युग युग में वंशज गर्व करें,
इस हेतु उसी की कहलाईं ।
फिर अपना पूर्ण प्रताप दिखा,
वह एक बार थीं मुसकाईं ।
पर वे ही वीणापाणि 'लली',
हँस कर न कभी मुझ तक आईं ।

क्यों मुझे किया है याद आज,
इन जाति प्रेम दीवानों ने ।
मेरे शब्दों में अपने ही,
औरों की जान विरानों ने ।
जब मन्त्रमुग्ध सा किया जगत,
इन विरह मिलन के गानों ने ।
हँस कर या रोकर बिदा माँगली,
देश जाति अभिमानों ने ।

लिखने को कोइ क्या लिख दे,
जिसके उर में कुछ भाव न हो ।
वह शुष्क शब्द का जाल रहा,
उसमें यदि अमिट प्रभाव न हो ।

कहते हो 'सुदृढ़ प्रयत्न करो',
करती यदि स्वास्थ्य अभाव न हो,
विस्मय है यदि इतने पर भी,
सम्पादक का दुर्भाव न हो।

फिर मुझ से परिचय पूँछा है,
मैं क्या लिख दूँ अपना परिचय।
औरों से तो कुछ कह भी दूँ,
अपनों से क्या अपना परिचय।
अब हे महर्षियों के वंशज!
दो तप बल विद्या का परिचय।
मम परिचय होगा वही बन्धु,
जैसा दोगे अपना परिचय।

नारि

विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

अबला हूँ कर्त्तव्य निरत को,
जिसकी शक्ति अनूप।
अबला हो कैसे मैं आती,
ले नारी का रूप।

सखि ! नारी क्या अबला है ?
विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

नारी प्रकृति विजय नारी है,
नारी शक्ति अपार।
जिसके हित वह अखिल अगोचर,
ब्रह्म हुआ साकार।

सखि ! विजय कहीं अबला है ?
विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

यह सन्देह हुआ है मन में,
या करती उपहास।
त्रिभुवन है इच्छुक पाने को,
मेरा ही मृदुहास।

सखि ! शक्ति कहीं अबला है ?
विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

किसी हृदयधन की रानी तू,
जग जीवन अनुराग।
वीर श्रेष्ठ की जननी तू ही
त्याग वेदना राग।

सखि ! माता क्या अबला है ?
विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

'लली' प्रकृति की वृहत् गोद में,
शिशु सा है संसार।
नव संदेश सुना, अब कर दे,
नवजीवन संचार।

सखि ! नारी ही सबला है।
विश्वविजयिनी बतला दे-
सखि ! क्या तू भी अबला है ?

कर्मभूमि

अब उठो, चलो, बढ़ चलो वीर !
है यही तुम्हारी कर्मभूमि ।

इस पर भगवान अवधपति ने,
आ असुरों का संहार किया ।
इस पर करुणानिधि केशव ने,
श्री गीता ज्ञान प्रसार किया ।

इस पर ऋषि गौतम बुद्ध हुये,
प्रभु शङ्कर की यह पुण्य भूमि ।

अब उठो, चलो, बढ़ चलो वीर !
है यही तुम्हारी कर्मभूमि ।

इस पर रणवीर शिवाजी से,
सारे अरिगण श्रीहीन हुये ।
बनवासी हो राणा प्रताप हैं,
धन्य अमर स्वाधीन हुये ।

जिनके गौरव की स्वर्ण शिखा,
अब तक भारत नभ रहा चूमि ।
अब उठो, चलो, बढ़ चलो वीर !
है यही तुम्हारी कर्मभूमि ।

इसके सुत मालवीय से हैं,
भगवन् ! उनका सन्मान रहे ।
अनुपम त्यागी श्री गाँधी जी का,
नित्य हमें अभिमान रहे ।

आदर्शों से परिपूर्ण 'लली',
अगणित वीरों की त्यागभूमि ।
अब उठो, चलो, बढ़ चलो वीर !
है यही तुम्हारी कर्मभूमि ।

वह रूप

ओ विश्वविजयिनी ! एक बार
फिर उसी रूप में आ जा।

ओ महाशक्ति ! वह अमित तेज
इन नयनों को दिखला जा।

तू एक बार हुंकार उठे,
जो अणु अणु में झंकार उठे,
'मैं आया' वीर पुकार उठे,

उस गगनभेदिनी वाणी में,
निज जयजयकार सुना जा।

प्रेयसि की रूप कथाओं में,
प्रियतम की विरह व्यथाओं में,
नैराश्य करुण गाथाओं में,

तन में, मन में, निशि में, दिन में,
तू मधुर रश्मि सी आ जा।

यौवन का तू उन्माद बने,
उर अन्तर का आह्लाद बने,
वीरों का तू जयनाद बने,

ओ सर्व व्यापिनी! एक बार,
बस तू ही तू दरशा जा।

जननी पद का सनमान रहे,
प्रिय भारत का अभिमान रहे,
युग युग में गौरव गान रहे,

आशीर्वाद का छत्र 'लली',
इस अखिल विश्व पर छा जा।